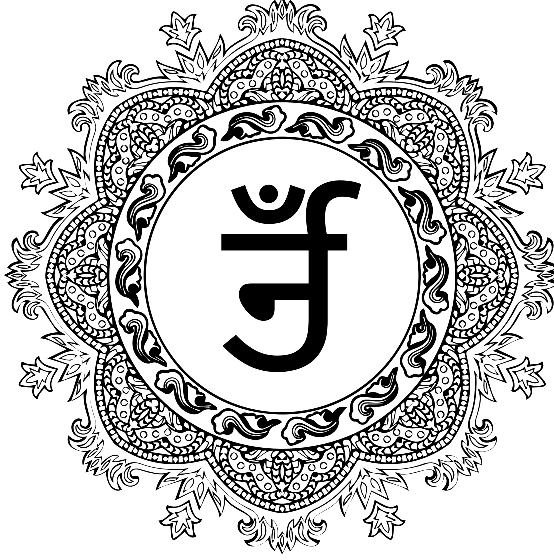


आलापपद्धतिः

श्रीमद् देवसेनाचार्य



आलापपद्धतिः

श्रीमद् देवसेनाचार्य

श्री देवसेनाचार्य

देवसेन नाम के कई आचार्यों के उल्लेख मिलते हैं। एक देवसेन वे हैं जिन्होंने विक्रम सं. 990 में दर्शन सार नामक ग्रंथ की रचना की थी। आलाप पद्धति, लघु नयचक्र, आराधना सार और तत्त्वसार नामक ग्रंथ भी आचार्य देवसेन के द्वारा रचित हैं। इन सब ग्रंथों को दर्शन सार के रचयिता देव सेन की कृति माना जाता है। इनका बनाया हुआ एक भाव संग्रह नाम का ग्रंथ है । उसमें वे अपने विषय में इस प्रकार कहते है-

सिरिविमलसेण गणहरसिस्सो णामेण देवसेणुत्ति ।
अबुहजणबोहणत्थं तेणेयं विरइयं सुतं ॥

इससे मालूम होता है कि इनके गुरु का नाम श्री विमलसेन गणधर (गणी) था। दर्शनसार नामक ग्रंथ के अंत में वे अपना परिचय देते हुए लिखते हैं :-

पुव्वायरियकराइं गाहाइं संचिऊण एयत्थ ।
सिरिदेवसेणगणिणा धाराए संवसंतेण ॥49॥
रइओ दंसणसारो हारो भव्वाण णवसए नवए ।
सिरिपासणाहगेहे सुविसुद्धे माहसुद्धदसमीए ॥50॥

अर्थात् पूर्वाचार्यों की रची हुई गाथाओं को एक जगह संचित करके श्रीदेवसेन गणि ने धारा नगरी में निवास करते हुए पार्श्वनाथ के मंदिर में माघ सुदी दशवी विक्रम संवत् 990 को यह दर्शनसार नामक ग्रंथ रचा। इससे निश्चय हो जाता है कि उनका अस्तित्व काल विक्रम की दसवीं शताब्दी है। अपने अन्य किसी ग्रंथ में उन्होंने ग्रंथ रचना का समय नहीं दिया है।

यद्यपि इनके किसी ग्रंथ में इस विषय का उल्लेख नहीं है कि वे किस संघ के आचार्य थे, परंतु दर्शनसार के पढ़ने से पह बात स्पष्ट हो जाती है कि वे मूलसंघ के आचार्य थे। दर्शनसार में उन्होंने काष्ठासंघ, माथुरसंघ और यापनीयसंघ आदि सभी दिगम्बर संघों की उत्पत्ति बतलाई है और उन्हें मिथ्यात्वी कहा है परंतु मूलसंघ के विषय में कुछ नहीं कहा है। अर्थात् उनके विश्वास के अनुसार यही मूल से चला आया हुआ असली संघ है ।

दर्शनसार की 43 वीं गाथा में लिखा है कि यदि आचार्य पद्मनन्दि (कुन्दकुन्द) सीमन्धर स्वामी द्वारा प्राप्त दिव्यज्ञान के द्वारा बोध न देते तो मुनिजन सच्चे मार्ग को कैसे जानते। इससे यह भी निश्चय हो जाता है कि वे श्री कुन्दकुन्दाचार्य की आम्नाय में थे।

॥ श्रीसर्वज्ञवीतरागाय नमः ॥

श्रीमद्-भगवत्देवसेनाचार्य-प्रणीत

आलापपद्धतिः

गुणानां विस्तरं वक्ष्ये स्वभावानां तथैव च।
पर्यायाणां विशेषेण नत्वा वीरं जिनेश्वरम् ॥1॥

अन्वयार्थ- **[वीरं जिनेश्वरम्]** विशेष रूप से मोक्ष लक्ष्मी को देने वाले वीर जिनेश्वर को अर्थात् श्री महावीर भगवान को **[नत्वा]** नमस्कार करके **[अहं]** मैं देवसेनाचार्य **[गुणानां]** द्रव्यगुणों के **[तथैव च]** और उसी प्रकार से **[स्वभावानां]** स्वभावों के तथा **[पर्यायाणां]** पर्यायों के भी **[विस्तरं]** विस्तार को **[विशेषेण]** विशेष रूप से **[वक्ष्ये]** कहता हूँ। अर्थात् गुण, स्वभाव और पर्यायों के स्वरूप विस्तारपूर्वक वर्णन करता हूँ।

आलापपद्धतिर्वचनरचनाऽनुक्रमेण नयचक्रस्योपरि उच्यते ॥1॥

अन्वयार्थ- वचनों की रचना के क्रम के अनुसार प्राकृतमय नयचक्र नामक शास्त्र के आधार पर से आलापपद्धति को (मैं देवसेनाचार्य) कहता हूँ।

सा च किमर्थम्? ॥2॥

अन्वयार्थ- इस आलापपद्धति ग्रंथ की रचना किसलिये की गई है?

द्रव्यलक्षणसिद्ध्यर्थं स्वभावसिद्ध्यर्थञ्च ॥3॥

अन्वयार्थ- द्रव्य के लक्षण की सिद्धि के लिए और पदार्थों के स्वभाव की सिद्धि के लिये इस ग्रंथ की रचना हुई है।

द्रव्याणि कानि? ॥4॥

अन्वयार्थ- द्रव्य कौन हैं?

जीव-पुद्गल-धर्माधर्माकाश-काल-द्रव्याणि ॥5॥

अन्वयार्थ- जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छह द्रव्य हैं।

सद्द्रव्यलक्षणम् ॥6॥

अन्वयार्थ- सत् द्रव्य का लक्षण है।

उत्पादव्ययध्रौव्युक्तं सत् ॥7॥

अन्वयार्थ- जो उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य से युक्त है वह सत् है।

॥ इति द्रव्याधिकारः ॥

गुणाधिकारः

लक्षणानि कानि? ॥8॥

अन्वयार्थ- द्रव्यों के लक्षण (गुण) कौन-कौन से हैं?

अस्तित्वं, वस्तुत्वं, द्रव्यत्वं, प्रमेयत्वं, अगुरुलघुत्वं, प्रदेशत्वं, चेतनत्वमचेतनत्वं, मूर्तत्वममूर्तत्वं, द्रव्याणां दश सामान्यगुणाः॥9॥

अन्वयार्थ- अस्तित्व, वस्तुत्व, द्रव्यत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्व, प्रदेशत्व, चेतनत्व, अचेतनत्व, मूर्तत्व, और अमूर्तत्व ये द्रव्यों के दस सामान्य गुण हैं।

प्रत्येकमष्टौ सर्वेषाम् ॥10॥

अन्वयार्थ- इन दस सामान्य गुणों में से प्रत्येक द्रव्य में आठ आठ गुण हैं और दो दो गुण नहीं हैं।

ज्ञानदर्शनसुखवीर्याणि, स्पर्शरसगन्धवर्णाः, गतिहेतुत्वं, स्थितिहेतुत्वं, अवगाहनहेतुत्वं, वर्तनाहेतुत्वं, चेतनत्वमचेतनत्वं, मूर्तत्वममूर्तत्वं द्रव्याणां षोडश विशेषगुणाः ॥11॥

अन्वयार्थ- ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, स्पर्श रस, गन्ध, वर्ण, गति-हेतुत्व, स्थिति-हेतुत्व, अवगाहन-हेतुत्व, वर्तना-हेतुत्व, चेतनत्व, अचेतनत्व, मूर्तत्व, अमूर्तत्व ये द्रव्यों के सोलह विशेष गुण हैं।

प्रत्येकं जीव पुद्गलयोः षट् ॥12॥

अन्वयार्थ- सोलह प्रकार के विशेष गुणों में से जीव और पुद्गल में छः-छः विशेष गुण पाये जाते हैं।

इतरेषां प्रत्येकं त्रयो गुणाः ॥13॥

अन्वयार्थ- धर्म-द्रव्य, अधर्म-द्रव्य, आकाश-द्रव्य और काल-द्रव्य इन चारों द्रव्यों में तीन-तीन विशेष गुण पाये जाते हैं।

अन्तस्थाश्चत्वारो गुणाः स्वजात्यपेक्षया सामान्यगुणा विजात्यपेक्षया त एव विशेषगुणाः ॥14॥

अन्वयार्थ- अन्त के चेतनत्व, अचेतनत्व, मूर्तत्व और अमूर्तत्व ये चार गुण स्वजाति की अपेक्षा से सामान्य-गुण तथा विजाति की अपेक्षा से विशेष-गुण कहे जाते हैं।

॥ इति गुणाधिकारः ॥

पर्याय अधिकारः

गुणविकाराः पर्यायास्ते द्वेधा अर्थव्यंजनपर्यायभेदात् ॥15॥

अन्वयार्थ- गुणों के विकार को पर्याय कहते हैं। वे पर्यायें दो प्रकार की हैं- १) अर्थ-पर्याय, २) व्यंजन-पर्याय।

अर्थपर्यायास्ते द्वेधा स्वभावविभावपर्यायभेदात् ॥16॥

अन्वयार्थ- अर्थपर्याय दो प्रकार की है- १) स्वभावार्थपर्याय और २) विभावार्थपर्याय ।

अगुरूलघुविकाराः स्वभावार्थपर्यायास्ते द्वादशधा षड्वृद्धिरूपाः षड्ढाहानिरूपाः; अनन्तभागवृद्धिः, असंख्यातभागवृद्धिः, संख्यातभागवृद्धिः, संख्यातगुणवृद्धिः, असंख्यातगुणवृद्धिः, अनन्तगुणवृद्धिः, इति षड्वृद्धिः, तथा अनन्तभागहानिः, असंख्यातभागहानिः, संख्यातभागहानिः, संख्यातगुणहानिः, असंख्यातगुणहानिः, अनन्तगुणहानिः, इति षड्हानिः। एवं षट्वृद्धिषड्ढानिरूपा ज्ञेयाः ॥17॥

अन्वयार्थ- अगुरूलघुगुण का परिणमन स्वाभाविक अर्थ-पर्यायें है। वे पर्यायें बारह प्रकार की हैं, छः वृद्धिरूप और छः हानिरूप। अनन्त-भाग वृद्धि, असंख्यात-भाग वृद्धि, संख्यात-भाग वृद्धि, संख्यात-गुण वृद्धि, असंख्यात-गुण वृद्धि, अनन्तगुण वृद्धि, ये छः वृद्धि-रूप पर्यायें है। अनन्त-भाग हानि, असंख्यात-भाग हानि, संख्यात-भाग हानि, संख्यात-गुण हानि, असंख्यात-गुण हानि,

अनन्त-गुण हानि, ये छः हानि-रूप पर्यायें हैं। इस प्रकार छः वृद्धि-रूप और छः हानि-रूप पर्यायें जाननी चाहिये।

विभावार्थपर्यायाः षड्विधाः मिथ्यात्व-कषाय-राग-द्वेष-पुण्य-पापरूपाऽध्यवसायाः ॥18॥

अन्वयार्थ- विभावअर्थपर्याय छः प्रकार की हैं (१) मिथ्यात्व (२) कषाय (३) राग (४) द्वेष (५) पुण्य और (६) पाप। ये छः अध्यवसाय विभाव अर्थ-पर्यायें हैं।

विभावद्रव्यव्यञ्जनपर्यायाश्चतुर्विधाः नरनारकादिपर्यायाः अथवा चतुरशीतिलक्षा योनयः ॥19॥

अन्वयार्थ- नर-नारक आदि रूप चार-प्रकार की अथवा चौरासी लाख योनि रूप जीव की विभाव द्रव्य-व्यंजन-पर्यायें हैं।

विभावगुणव्यंजनपर्याया मत्यादयः ॥20॥

अन्वयार्थ- मतिज्ञान आदिक जीव की विभाव-गुण-व्यंजन-पर्यायें हैं।

स्वभावद्रव्यव्यंजनपर्यायाश्चरमशरीरात् किञ्चिन्न्यूनसिद्ध-पर्यायाः ॥21॥

अन्वयार्थ- अन्तिम शरीर से कुछ कम जो सिद्ध पर्याय है, वह जीव की स्वभाव-द्रव्य-व्यंजनपर्याय है।

स्वभावगुणव्यंजनपर्याया अनन्तचतुष्टयरूपा जीवस्य ॥22॥

अन्वयार्थ- अनन्त-ज्ञान, अनन्त-दर्शन, अनन्त-सुख और अनन्त-वीर्य इन अनन्त-चतुष्टयरूप जीव की स्वभाव-गुण-व्यंजन-पर्याय है।

पुद्गलस्य तु द्व्यणुकादयो विभावद्रव्यव्यंजनपर्यायाः ॥23॥

अन्वयार्थ- द्वि-अणुक आदि स्कंध पुद्गल की विभाव-द्रव्य-व्यंजन-पर्याय है।

रसरसान्तरगन्धगन्धान्तरादिविभावगुणव्यंजनपर्यायाः ॥24॥

अन्वयार्थ- द्वि-अणुक आदि स्कन्धों में एक वर्ण से दूसरे वर्णरूप, एक रस से दूसरे रसरूप, एक गंध से दूसरे गंधरूप, एक स्पर्श से दूसरे स्पर्श रूप होने वाला चिरकाल-स्थायी-परिणमन पुद्गल की विभाव-गुण-व्यंजन-पर्याय है।

अविभागिपुद्गलपरमाणुः स्वभावद्रव्यव्यंजनपर्यायः ॥25॥

अन्वयार्थ- अविभागी पुद्गल परमाणु पुद्गल की स्वभाव-द्रव्य-व्यंजन-पर्याय है।

वर्णगंधरसैकैकाविरूद्धस्पर्शद्वयं स्वभावगुणव्यंजनपर्यायाः ॥

अन्वयार्थ- पुद्गल-परमाणु में एक वर्ण, एक गंध, एक रस और परस्पर अविरूद्ध दो स्पर्श होते हैं। इन गुणों की जो चिरकाल स्थायी पर्यायें हैं वे स्वभाव-गुण-व्यंजन पर्यायें हैं।

॥ इति पर्यायाधिकार ॥

स्वभावाधिकारः

गुणपर्ययवद्द्रव्यम् ॥27॥

अन्वयार्थ- गुण-पर्याय वाला द्रव्य है।

स्वभावाः कथ्यन्ते-अस्तिस्वभावः, नास्तिस्वभावः, नित्यस्वभावः, अनित्यस्वभावः, एकस्वभावः, अनेकस्वभावः, भेदस्वभावः, अभेदस्वभावः, भव्यस्वभावः, अभव्यस्वभावः, परमस्वभावः एते द्रव्याणामेकादश सामान्यस्वभावाः, चेतनस्वभावः, अचेतनस्वभावः, मूर्तस्वभावः, अमूर्तस्वभावः, एक-प्रदेशस्वभावः, अनेकप्रदेशस्वभावः, विभावस्वभावः, शुद्ध-स्वभावः, अशुद्धस्वभावः, उपचरितस्वभावः एते द्रव्याणां दश विशेषस्वभावाः ॥28॥

अन्वयार्थ- स्वभावों का कथन किया जाता है- १) अस्ति-स्वभाव, २) नास्ति-स्वभाव, ३) नित्य-स्वभाव, ४) अनित्य-स्वभाव, ५) एक-स्वभाव,६) अनेक-स्वभाव, ७) भेद-स्वभाव, ८) अभेद-स्वभाव, ९) भव्य-स्वभाव, १०) अभव्य-स्वभाव, ११) परम-स्वभाव ये ग्यारह, द्रव्यों के सामान्य स्वभाव हैं; १) चेतन-स्वभाव, २) अचेतन-स्वभाव, ३) मूर्त-स्वभाव, ४) अमूर्त-स्वभाव, ५) एकप्रदेश-स्वभाव, ६) अनेकप्रदेश-स्वभाव, ७) विभाव-स्वभाव, ८) शुद्ध-स्वभाव, ९) अशुद्ध-स्वभाव, १०) उपचरित-स्वभाव- ये दस, द्रव्यों के विशेष स्वभाव हैं।

जीवपुद्गलयोरेकविंशतिः ॥29॥

अन्वयार्थ- जीव में और पुद्गल में उपर्युक्त इक्कीस (११ सामान्य और १० विशेष) स्वभाव पाये जाते हैं ॥३५॥

चेतनस्वभावः मूर्तस्वभावः विभावस्वभावः अशुद्धस्वभावः उपचरितस्वभावः एतैर्विना धर्मादि [धर्माधर्माकाशानां] त्रयाणां षोडश स्वभावाः सन्ति ॥30॥

अन्वयार्थ- धर्म-द्रव्य, अधर्म-द्रव्य तथा आकाश-द्रव्य इन तीन द्रव्यों में उपर्युक्त २१ स्वभावों में से चेतन-स्वभाव, मूर्त-स्वभाव, विभाव-स्वभाव, उपचरित-स्वभाव और अशुद्ध-स्वभाव ये पाँच स्वभाव नहीं होते, शेष सोलह स्वभाव होते हैं। अर्थात् १) अस्ति-स्वभाव, २) नास्ति-स्वभाव, ३) नित्य-स्वभाव, ४) अनित्य-स्वभाव, ५) एक-स्वभाव, ६) अनेक-स्वभाव, ७) भेद-स्वभाव, ८) अभेद-स्वभाव, ९) परम-स्वभाव, १०) एकप्रदेश-स्वभाव, ११) अनेकप्रदेश-स्वभाव, १२) अमूर्त-स्वभाव, १३) अचेतन-स्वभाव, १४) शुद्ध-स्वभाव, १५) भव्य-स्वभाव, १६) अभव्य-स्वभाव- ये १६ स्वभाव होते हैं।

तत्र बहुप्रदेशं (शत्वं) विना कालस्य पञ्चदश स्वभावाः ॥31॥

अन्वयार्थ- उन सोलह स्वभावों में से बहुप्रदेश-स्वभाव के बिना शेष पन्द्रह स्वभाव काल-द्रव्य में पाये जाते हैं।

॥ इति स्वभावाधिकार ॥

प्रमाण अधिकार

ते कुतो ज्ञेयाः? ॥32॥

अन्वयार्थ- वे इक्कीस प्रकार के स्वभाव कैसे जाने जाते हैं, अर्थात् किसके द्वारा जाने जाते हैं?

प्रमाणनयविवक्षातः ॥33॥

अन्वयार्थ- प्रमाण और नय की विवक्षा के द्वारा उन इक्कीस स्वभावों के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान होता है।

सम्यग्ज्ञानं प्रमाणम् ॥34॥

अन्वयार्थ- सम्यग्ज्ञान को प्रमाण कहते हैं।

तद्द्वेधा प्रत्यक्षेतरभेदात् ॥35॥

अन्वयार्थ- प्रत्यक्ष-प्रमाण और इतर अर्थात् परोक्ष-प्रमाण के भेद से वह प्रमाण दो प्रकार का है।

अवधिमनःपर्ययावेकदेशप्रत्यक्षौ ॥36॥

अन्वयार्थ- अवधि-ज्ञान और मनःपर्यय-ज्ञान ये दोनों एकदेश प्रत्यक्ष हैं।

केवलं सकलप्रत्यक्षं ॥37॥

अन्वयार्थ- केवलज्ञान सकल प्रत्यक्ष है।

मतिश्रुते परोक्षे ॥38॥

अन्वयार्थ- मतिज्ञान और श्रुतज्ञान ये दो परोक्ष-ज्ञान हैं।

॥ इति प्रमाणाधिकार ॥

नयाधिकार

तदवयवा नयाः ॥39॥

अन्वयार्थ- प्रमाण के अवयव नय हैं।

नयभेदा उच्यन्ते ॥40॥

अन्वयार्थ- नय के भेदों को कहते हैं।

द्रव्यार्थिकः, पर्यायार्थिकः, नैगमः, संग्रहः, व्यवहारः, ऋजुसूत्रः, शब्दः, समभिरूढः, एवंभूत इति नव नयाः स्मृताः ॥41॥

अन्वयार्थ- द्रव्यार्थिक नय, पर्यायार्थिक नय, नैगम नय, संग्रह नय, व्यवहार नय, ऋजुसूत्र नय, शब्द नय, समभिरूढ नय, एवंभूत नय ये नव नय माने गये हैं ॥४१॥

उपनयाश्च कथ्यन्ते ॥42॥

अन्वयार्थ- अब उपनयों का कथन करते हैं।

नयानां समीपा उपनयाः ॥43॥

अन्वयार्थ- जो नयों के समीप में रहें वे उपनय हैं।

सद्भूतव्यवहारः असद्भूतव्यवहारः उपचरितासद्भूतव्यवहारश्चेत्युपनयास्त्रेधा ॥44॥

अन्वयार्थ- सद्भूत-व्यवहार, असद्भूतव्यवहार और उपचरित-असद्भूत-व्यवहार ऐसे उपनय के तीन भेद होते हैं।

इदानीमेतेषां भेदा उच्यन्ते ॥45॥

अन्वयार्थ- अब उनके (नयों और उपनयों के) भेदों को कहते हैं।

द्रव्यार्थिकस्य दश भेदाः ॥46॥

अन्वयार्थ- द्रव्यार्थिक नय के दश भेद हैं।

१. कर्मोपाधिनिरपेक्षः शुद्धद्रव्यार्थिकः, यथा संसारीजीवः सिद्धसदृक्शुद्धात्मा ॥47॥

अन्वयार्थ- शुद्ध द्रव्यार्थिक नय का विषय कर्मोपाधि की अपेक्षा रहित जीव-द्रव्य है, जैसे- संसारी जीव सिद्ध समान शुद्धात्मा है।

२. उत्पादव्ययगौणत्वेन सत्ताग्राहकः शुद्धद्रव्यार्थिको यथा द्रव्यं नित्यम् ॥48॥

अन्वयार्थ- उत्पाद-व्यय को गौण करके (अप्रधान करके) सत्ता (ध्रौव्य) को ग्रहण करने वाला शुद्ध द्रव्यार्थिकनय है, जैसे- द्रव्य नित्य है।

३. भेदकल्पनानिरपेक्षः शुद्धो द्रव्यार्थिको यथा निजगुणपर्यायस्वभावाद् द्रव्यमभिन्नम् ॥49॥

अन्वयार्थ- शुद्ध द्रव्यार्थिकनय भेद-कल्पना की अपेक्षा से रहित है, जैसे- निज गुण से, निज पर्याय से और निज स्वभाव से द्रव्य अभिन्न है।

४. कर्मोपाधिसापेक्षोऽशुद्धद्रव्यार्थिको यथा क्रोधादिकर्मजभाव आत्मा ॥50॥

अन्वयार्थ- कर्मोपाधि की अपेक्षा सहित अशुद्ध जीव-द्रव्य अशुद्ध-द्रव्यार्थिक नय का विषय है, जैसे- कर्मजनित क्रोधादिभावरूप आत्मा है।

५. उत्पादव्ययसापेक्षोऽशुद्धद्रव्यार्थिको यथैकस्मिन् समये द्रव्यमुत्पादव्ययध्रौव्यात्मकम् ॥51॥

अन्वयार्थ- उत्पाद-व्यय की अपेक्षा सहित द्रव्य अशुद्ध द्रव्यार्थिकनय का विषय है, जैसे- एक ही समय में उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यात्मक द्रव्य है।

६. भेदकल्पनासापेक्षोऽशुद्धद्रव्यार्थिको यथात्मनो दर्शनज्ञानादयोगुणाः ॥52॥

अन्वयार्थ- भेदकल्पना-सापेक्ष द्रव्य अशुद्ध-द्रव्यार्थिक नय का विषय है, जैसे- आत्मा के ज्ञान-दर्शनादि गुण हैं।

७. अन्वयसापेक्षो द्रव्यार्थिको यथा गुणपर्यायस्वभावं द्रव्यम्॥53॥

अन्वयार्थ- सम्पूर्ण गुण पर्याय और स्वभावों में द्रव्य को अन्वयरूप से ग्रहण करने वाला नय अन्वय सापेक्ष द्रव्यार्थिक नय है।

८. स्वद्रव्यादिग्राहकद्रव्यार्थिको यथा स्वद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया द्रव्यमस्ति ॥54॥

अन्वयार्थ- स्व-द्रव्य, स्व-क्षेत्र, स्व-काल, स्व-भाव की अपेक्षा द्रव्य को अस्ति रूप से ग्रहण करने वाला नय स्वद्रव्यादिग्राहक द्रव्यार्थिक नय है।

९. परद्रव्यादिग्राहकद्रव्यार्थिको यथा परद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया द्रव्यं नास्ति ॥55॥

अन्वयार्थ- पर-द्रव्य, पर-क्षेत्र, पर-काल, पर-स्वभाव की अपेक्षा द्रव्य नास्ति रूप है ऐसा परद्रव्यादिग्राहक द्रव्यार्थिक नय है।

१०. परमभावग्राहकद्रव्यार्थिको यथा ज्ञानस्वरूप आत्मा, अत्रानेक स्वभावानां मध्ये ज्ञानाख्यः परमस्वभावो गृहीतः ॥56॥

अन्वयार्थ- ज्ञान-स्वरूप आत्मा ऐसा कहना परमभावग्राहक द्रव्यार्थिक नय का विषय है, क्योंकि इसमें जीव के अनेक स्वभावों में से ज्ञान नामक परमभाव का ही ग्रहण किया गया है।

अथ पर्यायार्थिकस्य षड्भेदाः ॥57॥

अन्वयार्थ- अब पर्यायार्थिक नय के छः भेदों का कथन करते हैं-

१. अनादिनित्यपर्यायार्थिको यथा पुद्गलपर्यायो नित्यो मेर्वादिः ॥

अन्वयार्थ- अनादि-नित्य पर्यायार्थिक नय जैसे मेरू आदि पुद्गल की पर्याय नित्य है।

२. सादिनित्यपर्यायार्थिको यथा सिद्धपर्यायो नित्यः ॥59॥

अन्वयार्थ- सादि नित्यपर्यायार्थिक नय, जैसे- सिद्धपर्याय नित्य है।

३. सत्तागौणत्वेनोत्पादव्ययग्राहकस्वभावोऽनित्यशुद्धपर्यायार्थिको यथासमयं समयं प्रति पर्याया विनाशिनः ॥60॥

अन्वयार्थ- ध्रौव्य को गौण करके उत्पाद-व्यय को ग्रहण करने वाला नय अनित्यशुद्धपर्यायार्थिक नय है, जैसे- प्रति समय पर्याय विनाश होती है।

४. सत्तासापेक्षस्वभावोनित्याशुद्धपर्यायार्थिको यथा एकस्मिन् समये त्रयात्मकः पर्यायः ॥61॥

अन्वयार्थ- ध्रौव्य की अपेक्षा सहित ग्रहण करने वाला नय नित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिक नय है। जैसे- एक समय में पर्याय उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यात्मक है।

५. कर्मोपाधिनिरपेक्षस्वभावोनित्यशुद्धपर्यायार्थिको यथा सिद्धपर्यायसदृशाः शुद्धाः संसारिणां पर्यायाः ॥62॥

अन्वयार्थ- कर्मोपाधि (कर्मबंधन) से निरपेक्ष ग्रहण करने वाला नय नित्य-शुद्ध-पर्यायार्थिक नय है। जैसे- संसारी जीवों की पर्याय (अरहंत पर्याय) सिद्ध समान शुद्ध है।

६. कर्मोपाधिसापेक्षस्वभावोऽनित्याशुद्धपर्यायार्थिको यथा संसारिणामुत्पत्तिमरणे स्तः ॥63॥

अन्वयार्थ- अनित्य-अशुद्ध-पर्यायार्थिक नय का विषय कर्मोपाधि सापेक्ष स्वभाव है, जैसे- संसारी जीवों का जन्म तथा मरण होता है।

नैगमस्त्रेधा भूतभाविवर्तमानकालभेदात् ॥64॥

अन्वयार्थ- भूत, भावि, वर्तमानकाल के भेद से नैगमनय तीन प्रकार का है।

अतीते वर्तमानारोपणं यत्र, स भूतनैगमो यथा अद्य दीपोत्सवदिने श्रीवर्द्धमानस्वामी मोक्षं गतः ॥65॥

अन्वयार्थ- जहाँ पर अतीतकाल में वर्तमान को संस्थापन किया जाता है, वह भूत नैगम नय है। जैसे- आज दीपावली के दिन श्री महावीर स्वामी मोक्ष गये हैं।

भाविनि भूतवत् कथनं यत्र स भाविनैगमो यथा अर्हन् सिद्ध एव ॥66॥

अन्वयार्थ- जहाँ भविष्यत् पर्याय में भूतकाल के समान कथन किया जाता है वह भाविनैगम नय है। जैसे- अरहन्त सिद्ध ही हैं।

कर्तुमारब्धमीषन्निष्पन्नमनिष्पन्नं वा वस्तु निष्पन्नवत्कथ्यते यत्र स वर्तमाननैगमो यथा ओदनः पच्यते ॥67॥

अन्वयार्थ- करने के लिए प्रारम्भ की गई ऐसी ईषत्-निष्पन्न (थोड़ी बनी हुई) अथवा अनिष्पन्न (बिल्कुल नहीं बनी हुई) वस्तु को निष्पन्नवत् कहना वह वर्तमान नैगम नय है। जैसे- भात पकाया जाता है।

संग्रहो द्वेधाः ॥68॥

अन्वयार्थ- संग्रह नय दो प्रकार का है। (१) सामान्य संग्रह (२) विशेष संग्रह। अथवा, शुद्ध संग्रह, अशुद्ध संग्रह के भेद से दो प्रकार का है। समान्य संग्रह को शुद्ध संग्रह और विशेष संग्रह को अशुद्ध संग्रह समझना चाहिए।

सामान्यसंग्रहो यथा सर्वाणि द्रव्याणि परस्परमविरोधीनि ॥

अन्वयार्थ- सामान्य संग्रह नय, जैसे- सर्व द्रव्य परस्पर अविरोधी हैं।

विशेषसंग्रहो यथा सर्वे जीवाः परस्परमविरोधिनः ॥70॥

अन्वयार्थ- विशेष-संग्रहनय, जैसे- सर्व जीव परस्पर में अविरोधी हैं, एक हैं।

व्यवहारोऽपि द्वेधा ॥71/1॥

अन्वयार्थ- व्यवहारनय भी दो प्रकार का है।

सामान्यसंग्रहभेदको व्यवहारो यथा द्रव्याणि जीवाजीवाः ॥71/2॥

अन्वयार्थ- समान्य संग्रह-नय के विषयभूत पदार्थ में भेद करने वाला सामान्य संग्रहभेदक व्यवहारनय है। जैसे- द्रव्य के दो भेद हैं, जीव और अजीव।

विशेषसंग्रहभेदको व्यवहारो यथा जीवाः संसारिणो मुक्ताश्च ॥72॥

अन्वयार्थ- विशेष संग्रह-नय के विषयभूत पदार्थ को भेदरूप से ग्रहण करने वाला विशेष-संग्रहभेदक व्यवहार नय है, जैसे- जीव के संसारी और मुक्त ऐसे दो भेद करना।

ऋजुसूत्रोपि द्विविधः ॥73॥

अन्वयार्थ- ऋजुसूत्रनय भी दो प्रकार का है। अर्थात् १) सूक्ष्मऋजुसूत्र नय २) स्थूलऋजुसूत्र नय ।

सूक्ष्मर्जुसूत्रो यथा एकसमयावस्थायी पर्यायः ॥74॥

अन्वयार्थ- जो नय एक समयवर्ती पर्याय को विषय करता है वह सूक्ष्म-ऋजुसूत्र नय है।

स्थूलर्जुसूत्रो यथा मनुष्यादिपर्यायास्तदायुः प्रमाणकालं तिष्ठन्ति ॥

अन्वयार्थ- जो नय अनेक समयवर्ती स्थूल-पर्याय को विषय करता है, वह स्थूल-ऋजुसूत्र नय है। जैसे- मनुष्यादि पर्यायें अपनी-अपनी आयु प्रमाण काल तक रहती हैं।

शब्दसमभिरूढैवंभूता नयाः प्रत्येकमेकैका नयाः ॥76॥

अन्वयार्थ- शब्द-नय, समभिरूढ-नय और एवंभूत-नय इन तीनों नयों में से प्रत्येक नय एक एक प्रकार का है। शब्द-नय एक प्रकार का है, समभिरूढ-नय एक प्रकार का है तथा एवंभूत-नय एक प्रकार का है।

शब्दनयो यथा दाराः भार्या कलत्रं जलं आपः ॥77॥

अन्वयार्थ- शब्द नय जैसे- दारा, भार्या, कलत्र अथवा जल व आप एकार्थवाची हैं।

समभिरूढनयो यथा गौः पशुः ॥78॥

अन्वयार्थ- नाना अर्थों को 'सम' अर्थात् छोड़कर प्रधानता से एक अर्थ में रूढ होता है वह समभिरूढ है। जैसे- 'गौ' शब्द के वचन आदि अनेक अर्थ पाये जाते हैं तथापि वह 'पशु' अर्थ में रूढ है।

एवंभूतनयो यथा इन्दतीति इन्द्रः ॥79॥

अन्वयार्थ- जिस नय में वर्तमान क्रिया ही प्रधान होती है वह एवंभूतनय है। जैसे- जिस समय देवराज इन्दन क्रिया को करता है उस समय ही इस नय की दृष्टि में वह इन्द्र है।

उपनयभेदा उच्यन्ते ॥80॥

अन्वयार्थ- उपनय के भेदों को कहते हैं।

सद्भूतव्यवहारो द्विधा ॥81॥

अन्वयार्थ- सद्भूत व्यवहारनय दो प्रकार का है।

शुद्धसद्भूत व्यवहारो यथा शुद्धगुणशुद्धगुणिनोः शुद्धपर्याय-शुद्धपर्यायिणोर्भेदकथनम् ॥82॥

अन्वयार्थ- शुद्धगुण और शुद्धगुणी में तथा शुद्धपर्याय और शुद्धपर्यायी में जो नय भेद का कथन करता है, वह शुद्धसद्भूत व्यवहारनय है।

अशुद्धसद्भूतव्यवहारो यथाऽशुद्धगुणाऽशुद्धगुणिनोरशुद्ध-पर्यायाशुद्धपर्यायिणोर्भेद कथनम् ॥83॥

अन्वयार्थ- अशुद्ध-गुण और अशुद्ध-गुणी में तथा अशुद्ध-पर्याय और अशुद्ध-पर्यायी में जो नयभेद का कथन करता है वह अशुद्ध-सद्भूत-व्यवहारनय है।

असद्भूतव्यवहारस्त्रेधा ॥84॥

अन्वयार्थ- असद्भूत-व्यवहारनय तीन प्रकार का है।

स्वजात्यसद्भूतव्यवहारो यथा परमाणुर्बहुप्रदेशीति कथन-मित्यादि ॥85॥

अन्वयार्थ- स्वजाति-असद्भूत-व्यवहारनय, जैसे- परमाणु को बहुप्रदेशी कहना, इत्यादि।

विजात्यसद्भूतव्यवहारो यथा मूर्तं मतिज्ञानं यतो मूर्त द्रव्येण जनितम् ॥86॥

अन्वयार्थ- विजात्य-सद्भूत-व्यवहार उपनय, जैसे- मतिज्ञान मूर्त है क्योंकि मूर्त-द्रव्य से उत्पन्न हुआ है।

स्वजातिविजात्यसद्भूतव्यवहारो यथा ज्ञेये जीवेऽजीवे ज्ञानमिति कथनं ज्ञानस्य विषयात् ॥87॥

अन्वयार्थ- ज्ञान का विषय होने के कारण जीव अजीव ज्ञेयों में ज्ञान का कथन करना स्वजाति-विजात्य-सद्भूत-व्यवहारोपनय है।

उपचरितासद्भूतव्यवहारस्त्रेधा ॥88॥

अन्वयार्थ- उपचरित असद्भूत व्यवहारनय तीन प्रकार का है।

स्वजात्युपचरितासद्भूतव्यवहारो यथा पुत्रदारादि मम ॥89॥

अन्वयार्थ- पुत्र, स्त्री आदि मेरे हैं ऐसा कहना स्वजात्युपचरितासद्भूत-व्यहारनय का विषय है।

विजात्युपचरितासद्भूतव्यवहारो यथा वस्त्राभरणहेमरत्नादिमम ॥

अन्वयार्थ- वस्त्र, आभूषण, स्वर्ण, रत्नादि मेरे हैं ऐसा कहना विजात्युपचरित-असद्भूत-व्यवहार उपनय है।

स्वजातिविजात्युपचरितासद्भूतव्यवहारो यथा देशराज्यदुर्गादि मम ॥91॥

अन्वयार्थ- 'देश, राज्य, दुर्ग, आदि मेरे हैं' यह स्वजातिविजात्युपचरित-असद्भूतव्यवहार उपनय का विषय है।

॥ इति नयाधिकार ॥

गुण व्युत्पत्ति अधिकार

सहभुवो गुणाः, क्रमवर्तिनः पर्यायाः ॥92॥

अन्वयार्थ- साथ में होने वाले गुण हैं और क्रम-क्रम से होने वाली पर्यायें हैं। अर्थात् अन्वयी गुण हैं और व्यतिरेक परिणाम पर्यायें हैं।

गुण्यते पृथक्क्रियते द्रव्यं द्रव्याद्यैस्तेगुणाः ॥93॥

अन्वयार्थ- जिनके द्वारा एक द्रव्य दूसरे द्रव्य से पृथक् किया जाता है, वे (विशेष) गुण कहलाते हैं।

अस्तीत्येतस्य भावोऽस्तिस्वं सद्रूपत्वम् ॥94॥

अन्वयार्थ- 'अस्ति' इसके भाव को अर्थात् सत्-रूपपने को अस्तित्व कहते हैं।

वस्तुनोभावो वस्तुत्वम्, सामान्यविशेषात्मकं वस्तु ॥95॥

अन्वयार्थ- सामान्य-विशेषात्मक वस्तु होती है। उस वस्तु का जो भाव वह वस्तुत्व है।

द्रव्यस्य भावो द्रव्यत्वम्, निजनिजप्रदेशसमूहैरखण्डवृत्या स्वभावविभावपर्यायान् द्रवति द्रोष्यति अदुद्रुवदिति द्रव्यम् ॥96॥

अन्वयार्थ- जो अपने-अपने प्रदेश समूह के द्वारा अखण्डपने से अपने स्वभाव-विभाव पर्यायों को प्राप्त होता है, होवेगा, हो चुका है, वह द्रव्य है। उस द्रव्य को जो भाव है, वह द्रव्यत्व है।

सद्द्रव्यलक्षणम्, सीदति स्वकीयान् गुणपर्यायान् व्याप्नोतीति सत्, उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥97॥

अन्वयार्थ- द्रव्य का लक्षण सत् है। अपने गुण और पर्यायों को व्याप्त होने वाला सत् है। अथवा जो उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य से युक्त है, वह सत् है।

प्रमेयस्यभावः प्रमेयत्वम्, प्रमाणेन स्वपररूपं परिच्छेद्यं प्रमेयम् ॥

अन्वयार्थ- प्रमाण के द्वारा जानने के योग्य जो स्व और पर-स्वरूप है, वह प्रमेय है। उस प्रमेय के भाव को प्रमेयत्व कहते हैं।

अगुरुलघोर्भावोऽगुरुलघुत्वम् सूक्ष्मा अवाग्गोचराः प्रतिक्षणवर्तमाना आगमप्रमाण्यादभ्युपगम्या अगुरुलघुगुणाः ॥

अन्वयार्थ- जो सूक्ष्म है, वचन के अगोचर है, प्रतिसमय में परिणमनशील है तथा आगम प्रमाण से जाना जाता है, वह अगुरुलघुगुण है।

प्रदेशस्य भावः प्रदेशत्वं क्षेत्रत्वं अविभागिपुद्गलपरमाणु-नावष्टब्धम् ॥100॥

अन्वयार्थ- प्रदेश का भाव प्रदेशत्व है अथवा क्षेत्रत्व है। एक अविभागी पुद्गल परमाणु के द्वारा व्याप्त क्षेत्र को प्रदेश कहते हैं।

चेतनस्य भावश्चेतनत्वम् चैतन्यमनुभवनम् ॥101॥

अन्वयार्थ- चेतन के भाव को अर्थात् पदार्थों के अनुभव को चेतनत्व कहते हैं।

अचेतनस्य भावोऽचेतनत्वमचैतन्यमननुभवनम् ॥102॥

अन्वयार्थ- अचेतन के भाव को अर्थात् पदार्थों के अननुभवन को अचेतनत्व कहते हैं।

मूर्तस्य भावो मूर्तत्वं रूपादिमत्त्वम् ॥103॥

अन्वयार्थ- मूर्त के भाव को अर्थात् रूप, रस, गंध, स्पर्शयुक्तता को मूर्त कहते हैं।

अमूर्तस्य भावोऽमूर्तत्वं रूपादिरहितत्वम् ॥104॥

अन्वयार्थ- अमूर्त के भाव को अर्थात् स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण से रहितपने को अमूर्तत्व कहते हैं।

॥ इस प्रकार गुणों की व्युत्पत्ति का प्ररूपण हुआ ॥

पर्याय की व्युत्पत्ति

स्वभावविभावरूपतया याति पर्येति परिणमतीति पर्यायः ॥105॥

अन्वयार्थ- जो स्वभाव विभावरूप से सदैव परिणमन करती रहती है, वह पर्याय है।

॥ इस प्रकार पर्याय की व्युत्पत्ति का प्ररूपण हुआ ॥

स्वभावव्युत्पत्ति अधिकार

स्वभावलाभादच्युतत्वादस्तिस्वभावः ॥106॥

अन्वयार्थ- जिस द्रव्य को जो स्वभाव प्राप्त है उससे कभी भी च्युत नहीं होना अस्ति-स्वभाव है।

परस्वरूपेणाभावान्नास्तिस्वभावः ॥107॥

अन्वयार्थ- पर-स्वरूप नहीं होना नास्ति स्वभाव है।

निज-निज-नानापर्यायेषु तदेवेदमिति द्रव्यस्योपलम्भान्नित्यस्वभावः ॥108॥

अन्वयार्थ- अपनी अपनी नाना पर्यायों में 'यह वही है' इस प्रकार द्रव्य की प्राप्ति 'नित्य-स्वभाव' है।

तस्याप्यनेकपर्यायपरिणामितत्त्वादनित्यस्वभावः ॥109॥

अन्वयार्थ- उस द्रव्य का अनेक पर्यायरूप परिणत होने से अनित्य स्वभाव है।

स्वभावानामेकाधारत्वादेकस्वभावः ॥110॥

अन्वयार्थ- सम्पूर्ण स्वभावों का एक आधार होने से एक स्वभाव है।

एकस्याप्यनेकस्वभावोपलम्भादनेक स्वभावः ॥111॥

अन्वयार्थ- एक ही द्रव्य के अनेक स्वभावों की उपलब्धि होने से 'अनेक-स्वभाव' है।

गुणगुण्यादिसंज्ञादिभेदाद् भेदस्वभावः ॥112॥

अन्वयार्थ- गुण, गुणी आदि में संज्ञा, संख्या, लक्षण और प्रयोजन की अपेक्षा भेद होने से 'भेद-स्वभाव' है।

गुणगुण्याद्येकस्वभावादभेदस्वभावः ॥113॥

अन्वयार्थ- गुण और गुणी का एक स्वभाव होने से अभेद स्वभाव है।

भाविकाले परस्वरूपाकार भवनाद् भव्यस्वभावः ॥114॥

अन्वयार्थ- भाविकाल में पर (आगामी पर्याय) स्वरूप होने से भव्य स्वभाव है।

कालत्रयेऽपि परस्वरूपाकाराभवनादभव्यस्वभावः ॥115॥

अन्वयार्थ- क्योंकि त्रिकाल में भी परस्वरूपाकार (दूसरे द्रव्य रूप) नहीं होगा अतः अभव्य-स्वभाव है।

पारिणामिकभावप्रधानत्वेन परमस्वभावः ॥116॥

अन्वयार्थ- पारिणामिक भाव की प्रधानता से परमस्वभाव है।

प्रदेशादिगुणानां व्युत्पत्तिश्चेतनादि विशेषस्वभावानां च व्युत्पत्तिर्निगदिता ॥117॥

अन्वयार्थ- प्रदेश आदि गुणों की व्युत्पत्ति तथा चेतनादि विशेष स्वभावों की व्युत्पत्ति कही गई।

धर्मापेक्षया स्वभावा गुणा न भवन्ति ॥118॥

अन्वयार्थ- धर्मों की अपेक्षा स्वभाव गुण नहीं होते।

स्वद्रव्यचतुष्टयापेक्षया परस्परं गुणाः स्वभावा भवन्ति ॥119॥

अन्वयार्थ- स्वद्रव्य चतुष्टय अर्थात् स्व-द्रव्य, स्व-क्षेत्र, स्व-काल और स्व-भाव की अपेक्षा परस्पर में गुण स्वभाव हो जाते हैं।

द्रव्याण्यपि भवन्ति ॥120॥

अन्वयार्थ- स्वद्रव्य चतुष्टय की अपेक्षा गुण द्रव्य भी हो जाते हैं।

स्वभावादन्यथाभवनं विभावः ॥121॥

अन्वयार्थ- स्वभाव से अन्यथा होने को, विपरीत होने को विभाव कहते हैं।

शुद्धं केवलभावमशुद्धं तस्यापि विपरीतम् ॥122॥

अन्वयार्थ- केवलभाव (खालिस, अमिश्रित भाव) शुद्ध-स्वभाव है। इस शुद्ध के विपरीत भाव अर्थात् मिश्रित-भाव अशुद्ध-स्वभाव है।

स्वभावस्याप्यन्यत्रोपचारादुपचरितस्वभावः ॥123॥

अन्वयार्थ- स्वभाव का भी अन्यत्र उपचार करना उपचरित-स्वभाव है।

स द्वेधा-कर्मजस्वाभाविकभेदात्। यथा जीवस्य मूर्तत्वम-चेतनत्वं। यथा सिद्धात्मनां परज्ञता परदर्शकत्वं च ॥124॥

अन्वयार्थ- वह उपचरितस्वभाव कर्मज और स्वाभाविक के भेद से दो प्रकार का है। जैसे- जीव के मूर्तत्व और अचेतनत्व कर्मज-उपचरितस्वभाव हैं तथा जैसे- सिद्ध आत्माओं के पर का जाननपना तथा पर का दर्शकत्व स्वाभाविक-उपचरित-स्वभाव है।

एवमितरेषां द्रव्याणामुपचारो यथासंभवो ज्ञेयः ॥125॥

अन्वयार्थ- इसी प्रकार अन्य द्रव्यों में भी यथासम्भव उपचरित-स्वभाव जानना चाहिए।

एकान्त पक्ष में दोष

तत्कथं? ॥126॥

अन्वयार्थ- वह किस प्रकार?

सर्वथैकान्तेन सद्रूपस्य न नियतार्थव्यवस्था, संकरादिदोषत्वात् ॥

अन्वयार्थ- संकरादि दोषों से दूषित होने के कारण सर्वथा एकान्त के मानने पर सद्रूप पदार्थ की नियत अर्थव्यवस्था नहीं हो सकती है।

तथासद्रूपस्य सकलशून्यताप्रसंगात् ॥128॥

अन्वयार्थ- यदि सर्वथा एकान्त से असद्रूप माना जाय तो सकल-शून्यता का प्रसंग आ जायेगा।

नित्यस्यैकरूपत्वादेकरूपस्यार्थक्रियाकारित्वाभावः। अर्थक्रियाकारित्वाभावे द्रव्यस्याप्यभावः ॥129॥

अन्वयार्थ- सर्वथा नित्यरूप मानने पर पदार्थ एकरूप हो जायगा, एकरूप होने पर अर्थक्रियाकारित्व का अभाव हो जायेगा और अर्थक्रियाकारित्व के अभाव में पदार्थ का ही अभाव हो जायेगा।

अनित्यपक्षेऽपि निरन्वयत्वात् अर्थक्रियाकारित्वाभावः। अर्थक्रियाकारित्वाभावे द्रव्यस्याप्यभावः ॥130॥

अन्वयार्थ- सर्वथा अनित्य पक्ष में भी निरन्वय अर्थात् निर्द्रव्यत्व होने से अर्थक्रियाकारित्व का अभाव हो जायेगा और अर्थक्रियाकारित्व का अभाव होने से द्रव्य का भी अभाव हो जायगा।

एकस्वरूपस्यैकान्तेन विशेषाभावः सर्वथैकरूपत्वात्। विशेषाभावे सामान्यस्याप्यभावः ॥131॥

अन्वयार्थ- एकान्त से एक-स्वरूप मानने पर सर्वथा एकरूपता होने से विशेष का अभाव हो जायेगा और विशेष का अभाव होने पर सामान्य का भी अभाव हो जायेगा।

अनेकपक्षेऽपि तथा द्रव्याभावो निराधारत्वात् आधाराधेयाभावाच्च ॥132॥

अन्वयार्थ- सर्वथा अनेक पक्ष में भी पदार्थों (पर्यायों) का निराधार होने से तथा आधार-आधेय का अभाव होने से द्रव्य का अभाव हो जायेगा।

भेदपक्षेऽपि विशेषस्वभावानां निराधारत्वादर्थक्रिया-कारित्वाभावः। अर्थक्रियाकारित्वाभावे द्रव्यस्याप्यभावः ॥133॥

अन्वयार्थ- गुण-गुणी और पर्याय-पर्यायी के सर्वथा भेद पक्ष में विशेष स्वभाव अर्थात् गुण और पर्यायों के निराधार हो जाने से अर्थक्रियाकारित्व का अभाव हो जायेगा और अर्थक्रियाकारित्व के अभाव में द्रव्य का भी अभाव हो जायेगा।

अभेदपक्षेऽपि सर्वेषामेकत्वम्, सर्वेषामेकत्वेऽर्थक्रियाकारित्वाभावः, अर्थक्रियाकारित्वाभावे द्रव्यस्याप्यभावः ॥134॥

अन्वयार्थ- सर्वथा अभेद पक्ष में गुण-गुणी, पर्याय-पर्यायी सम्पूर्ण पदार्थ एकरूप हो जायेंगे। सम्पूर्ण पदार्थों के एकरूप हो जाने पर अर्थक्रियाकारित्व का अभाव हो जायगा और अर्थक्रियाकारित्व के अभाव में द्रव्य का भी अभाव हो जायेगा।

भव्यस्यैकान्तेन पारिणामिकत्वात् द्रव्यस्य द्रव्यान्तरत्वप्रसङ्गात्, सङ्करादिदोषसम्भवात् ॥135॥

अन्वयार्थ- एकान्त से सर्वथा भव्य स्वभाव के मानने पर द्रव्य के द्रव्यान्तर का प्रसंग आ जायेगा, क्योंकि द्रव्य परिणामी होने के कारण पर-द्रव्यरूप भी परिणाम जायेगा। इस प्रकार संकर आदि दोष सम्भव हैं।

सर्वथाऽभव्यस्यैकान्तेऽपि तथा शून्यताप्रसङ्गात् स्वरूपेणाप्यभवनात् ॥136॥

अन्वयार्थ- एकांत से सर्वथा अभव्यस्वभाव के मानने पर शून्यता का प्रसंग आ जायेगा, क्योंकि स्वस्वरूप से भी वह नहीं हो सकेगा।

स्वभावस्वरूपस्यैकान्तेन संसाराभावः ॥137॥

अन्वयार्थ- एकान्त से सर्वथा स्वभावस्वरूप माना जाय तो संसार का ही अभाव हो जायेगा।

विभावपक्षेऽपि मोक्षस्याप्यभावः ॥138॥

अन्वयार्थ- स्वभाव निरपेक्ष विभाव के मानने पर मोक्ष का भी अभाव हो जायेगा।

सर्वथा चैतन्यमेवेत्युक्ते सर्वेषां शुद्धज्ञानचैतन्यावाप्तिः स्यात्, तथा सति ध्यानं ध्येयं ज्ञानं ज्ञेयं गुरुः शिष्याद्य-भावः ॥139॥

अन्वयार्थ- सर्वथा चैतन्य पक्ष के मानने से सब जीवों के शुद्ध-ज्ञानरूप चैतन्य की प्राप्ति हो जायेगी। शुद्धज्ञानरूप चैतन्य की प्राप्ति हो जाने पर ध्यान, ध्येय, ज्ञान, ज्ञेय, गुरू, शिष्य आदि का अभाव हो जायगा।

सर्वथाशब्दः सर्वप्रकारवाची, अथवा सर्वकालवाची, अथवा नियमवाची वा, अनेकान्तसापेक्षी वा? यदि सर्वप्रकारवाची, सर्वकालवाची अनेकान्तवाची वा, सर्वादिगणे पठनात् सर्वशब्द, एवं विधश्चेत्तर्हि सिद्धं नः समीहितम्। अथवा नियमवाची चेत्तर्हि

सकलार्थानां तव प्रतीतिः कथं स्यात्? नित्यः अनित्यः एकः अनेकः भेदः अभेदः कथं प्रतीतिः स्यात्, नियमितपक्षत्वात्? ॥

अन्वयार्थ- सर्वथा शब्द सर्वप्रकारवाची है, अथवा सर्वकालवाची है, अथवा नियमवाची है, अथवा अनेकान्तवाची है? यदि सर्व-आदि गण में पाठ होने से सर्वथा शब्द सर्वप्रकार, सर्वकालवाची अथवा अनेकान्तवाची है तो हमारा समीहित अर्थात् इष्टसिद्धान्त सिद्ध हो गया। यदि सर्वथा शब्द नियमवाची है तो फिर नियमित पक्ष होने के कारण सम्पूर्ण अर्थों की अर्थात् नित्य-अनित्य, एक-अनेक, भेद-अभेद आदि रूप सम्पूर्ण पदार्थों की प्रतीति कैसे होगी? अर्थात् नहीं हो सकेगी।

तथाऽचैतन्यपक्षेऽपि सकलचैतन्योच्छेदः स्यात् ॥141॥

अन्वयार्थ- वैसे ही सर्वथा अचेतन पक्ष के मानने पर सम्पूर्ण चेतन का उच्छेद हो जायेगा, क्योंकि केवल अचेतन ही माना गया है।

मूर्तस्यैकान्तेनात्मनो न मोक्षस्यावाप्तिः स्यात् ॥142॥

अन्वयार्थ- सर्वथा एकान्त से आत्मा को मूर्त स्वभाव के मानने पर आत्मा को कभी भी मोक्ष की प्राप्ति नहीं होगी, क्योंकि अष्ट कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जाने पर सिद्धात्मा अमूर्तिक हैं।

सर्वथाऽमूर्तस्यापि तथात्मनः संसारविलोपः स्यात् ॥143॥

अन्वयार्थ- आत्मा को सर्वथा अमूर्तिक मानने पर संसार का लोप हो जायेगा।

एकप्रदेशस्यैकान्तेनाखण्डपरिपूर्णस्यात्मनोऽनेककार्यकारित्व एव हानिः स्यात् ॥144॥

अन्वयार्थ- सर्वथा एकप्रदेशस्वभाव के मानने पर अखण्डता से परिपूर्ण आत्मा के अनेक कार्यकारित्व का अभाव हो जायेगा।

सर्वथाऽनेकप्रदेशत्वेऽपि तथा तस्यानर्थकार्यकारित्वं स्वस्वभावशून्यताप्रसङ्गात् ॥145॥

अन्वयार्थ- आत्मा के अनेक प्रदेशत्व मानने पर भी अखण्ड एकप्रदेशस्वरूप-आत्म-स्वभाव के अभाव हो जाने से अर्थक्रियाकारित्व का अभाव हो जायेगा।

शुद्धस्यैकान्तेनात्मनो न कर्ममल-कलङ्कावलेपः सर्वथा निरञ्जनत्वात् ॥146॥

अन्वयार्थ- सर्वथा एकान्त से शुद्धस्वभाव के मानने पर आत्मा सर्वथा निरंजन हो जायेगी। निरंजन हो जाने से कर्ममलरूपी कलंक का अवलेप अर्थात् कर्मबंध सम्भव नहीं होगा।

सर्वथाऽशुद्धैकान्तेऽपि तथाऽत्मनो न कदापि शुद्धस्वभाव-प्रसङ्गः स्यात् तन्यमयत्वात् ॥147॥

अन्वयार्थ- एकान्त से सर्वथा अशुद्ध स्वभाव के मानने पर अशुद्धमयी हो जाने से आत्मा को कभी भी शुद्धस्वभाव की प्राप्ति नहीं होगी अर्थात् मोक्ष नहीं होगा।

उपचरितैकान्त पक्षेऽपि नात्मज्ञता सम्भवति नियमित पक्षत्वात् ॥

अन्वयार्थ- उपचरित-स्वभाव के एकान्त पक्ष में भी आत्मज्ञता सम्भव नहीं है, क्योंकि नियत पक्ष है।

तथात्मनोऽनुपचरितपक्षेऽपि परज्ञतादीनां विरोधः स्यात् ॥149॥

अन्वयार्थ- उसी प्रकार अनुपचरित एकान्त पक्ष में भी आत्मा के परज्ञतादि का विरोध आ जायेगा।

॥ इस प्रकार एकान्त पक्ष में दोषों का प्ररूपण हुआ ॥

नय योजनिका

स्वद्रव्यादिग्राहकेणास्ति स्वभावः ॥150॥

अन्वयार्थ- स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल, स्वभाव अर्थात् स्वचतुष्टय को ग्रहण करने वाले द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से अस्तिस्वभाव है। क्योंकि स्वचतुष्टय की अपेक्षा अस्तिस्वभाव है।

परद्रव्यादिग्राहकेण नास्ति स्वभावः ॥151॥

अन्वयार्थ- परद्रव्य, परक्षेत्र, परकाल, परभाव अर्थात् परचतुष्टय को ग्रहण करने वाले द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा नास्तिस्वभाव है, क्योंकि परचतुष्टय की अपेक्षा नास्तिस्वभाव है।

उत्पादव्ययगौणत्वेन सत्ताग्राहकेण नित्यस्वभावः ॥152॥

अन्वयार्थ- उत्पाद, व्यय को गौण करके ध्रौव्य को ग्रहण करने वाले शुद्ध-द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा नित्यस्वभाव है।

केनचित्पर्यायार्थिकेनानित्यस्वभावः ॥153॥

अन्वयार्थ- किसी पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा अनित्यस्वभाव है।

भेदकल्पनानिरपेक्षेण एकस्वभावः ॥154॥

अन्वयार्थ- भेदकल्पनानिरपेक्ष शुद्धद्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा एकस्वभाव है।

अन्वयद्रव्यार्थिकेनैकस्यापि अनेकद्रव्यस्वभावत्वम् ॥155॥

अन्वयार्थ- अन्वयद्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से एक द्रव्य के भी अनेक स्वभाव पाये जाते हैं।

सद्भूतव्यवहारेण गुणगुण्यादिभिर्भेदस्वभावः ॥156॥

अन्वयार्थ- सद्भूतव्यवहार उपनय की अपेक्षा गुण-गुणी आदि में भेद-स्वभाव है।

भेदकल्पनानिरपेक्षेण गुणगुण्यादिभिरभेदस्वभावः ॥157॥

अन्वयार्थ- भेदकल्पना-निरपेक्ष शुद्ध द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा गुण-गुणी आदि में अभेद-स्वभाव है।

परमभावग्राहकेण भव्याभव्यपारिणामिकस्वभावः ॥158॥

अन्वयार्थ- परमभावग्राहक द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा भव्य और अभव्य पारिणामिक स्वभाव है।

शुद्धाशुद्धपरमभावग्राहकेण चेतनस्वभावो जीवस्य ॥159॥

अन्वयार्थ- शुद्धाशुद्ध-परमभावग्राहक द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा से जीव के चेतन-स्वभाव है।

असद्भूतव्यवहारेण कर्मनोकर्मणोरपि चेतनस्वभावः ॥160॥

अन्वयार्थ- असद्भूत-व्यवहार उपनय की अपेक्षा कर्म, नोकर्म के भी चेतन-स्वभाव है।

परमभावग्राहकेण कर्मनोकर्मणोरचेतनस्वभावः ॥161॥

अन्वयार्थ- परमभावग्राहक द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा कर्म, नोकर्म के अचेतन स्वभाव है।

जीवस्याप्यसद्भूतव्यवहारेणाचेतनस्वभावः ॥162॥

अन्वयार्थ- विजात्यसद्भूतव्यवहार उपनय की अपेक्षा जीव के भी अचेतन-स्वभाव है।

परमभावग्राहकेण कर्मनोकर्मणोर्मूर्त्तस्वभावः ॥163॥

अन्वयार्थ- परमभावग्राहक द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा कर्म, नोकर्म के मूर्त-स्वभाव है।

जीवस्याप्यसद्भूतव्यवहारेण मूर्तस्वभावः ॥164॥

अन्वयार्थ- असद्भूतव्यवहार-उपनय की अपेक्षा जीव के भी मूर्तस्वभाव है।

परमभावग्राहकेण पुद्गलं विहाय इतरेषाममूर्तस्वभावः ॥165॥

अन्वयार्थ- परमभावग्राहक द्रव्यार्थिक-नय की अपेक्षा पुद्गल के अतिरिक्त जीवद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और कालद्रव्य के अमूर्त-स्वभाव है।

पुद्गलस्योपचारादेवास्त्यमूर्त्तत्वम् ॥166॥

अन्वयार्थ- पुद्गल के भी उपचार से अमूर्त-स्वभाव है।

परमभावग्राहकेण कालपुद्गलाणूनामेकप्रदेशस्वभावत्वम् ॥167॥

अन्वयार्थ- परमभावग्राहक द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा कालाणुद्रव्य और पुद्गल-परमाणु के एकप्रदेश स्वभाव है।

भेदकल्पनानिरपेक्षेणेतरेषां चाखण्डत्वादेक-प्रदेशत्वम् ॥168॥

अन्वयार्थ- भेदकल्पनानिरपेक्ष द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और जीवद्रव्य के भी एकप्रदेश-स्वभाव है क्योंकि वे अखण्ड हैं।

भेदकल्पनासापेक्षेण चतुर्णामपि नानाप्रदेशस्वभावत्वम् ॥169॥

अन्वयार्थ- भेदकल्पना-सापेक्ष अशुद्ध द्रव्यार्थिक-नय की अपेक्षा धर्म-द्रव्य, अधर्म-द्रव्य, आकाश-द्रव्य और जीव-द्रव्य के नानाप्रदेश-स्वभाव है।

पुद्गलाणोरुपचारतो नानाप्रदेशत्वम्; न च कालाणोः स्निग्धरूक्षत्वाभावात् ऋजुत्वाच्च ॥170॥

अन्वयार्थ- उपचार से पुद्गल-परमाणु के नानाप्रदेश-स्वभाव है किन्तु कालाणु के उपचार से भी नानाप्रदेश-स्वभाव नहीं है क्योंकि कालाणु में स्निग्ध व रूक्ष गुण का अभाव है तथा वह स्थिर है।

अणोरमूर्तकालस्यैकविंशतितमो भावो न स्यात् ॥171॥

अन्वयार्थ- अमूर्तिक कालाणु के २१ वाँ अर्थात् उपचरित-स्वभाव नहीं है।

परोक्षप्रमाणापेक्षयाऽसद्भूतव्यवहारेणाप्युपचारेणामूर्तत्वं पुद्गलस्य॥

अन्वयार्थ- परोक्षप्रमाण की अपेक्षा से और असद्भूतव्यवहार उपनय की दृष्टि से पुद्गल के उपचार से अमूर्त स्वभाव भी है।

शुद्धाशुद्धद्रव्यार्थिकेन स्वभावविभावत्वम् ॥173॥

अन्वयार्थ- शुद्ध-द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा द्रव्य में स्वभाव भाव है और अशुद्ध-द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा जीव, पुद्गल में विभाव-स्वभाव है।

शुद्धद्रव्यार्थिकेन शुद्धस्वभावः ॥174॥

अन्वयार्थ- शुद्ध द्रव्यार्थिक-नय की अपेक्षा शुद्ध-स्वभाव है।

अशुद्धद्रव्यार्थिकेनाशुद्धस्वभावः ॥175॥

अन्वयार्थ- अशुद्धद्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा अशुद्ध-स्वभाव है।

असद्भूतव्यवहारेण उपचरितस्वभावः ॥176॥

अन्वयार्थ- असद्भूतव्यवहार नय की अपेक्षा उपचरित-स्वभाव है।

॥ इस प्रकार नययोजनिका का प्ररूपण हुआ ॥

प्रमाण का कथन

सकलवस्तुग्राहकं प्रमाणं, प्रमीयते परिच्छिद्यते वस्तुतत्त्वं येन ज्ञानेन तत्प्रमाणम् ॥177॥

अन्वयार्थ- सकल वस्तु को ग्रहण करने वाला ज्ञान प्रमाण है। जिस ज्ञान के द्वारा वस्तुस्वरूप जाना जाता है, निश्चय किया जाता है, वह ज्ञान प्रमाण है।

तद्द्वेधा सविकल्पेतरभेदात् ॥178॥

अन्वयार्थ- सविकल्प और निर्विकल्प के भेद से प्रमाण दो प्रकार का है।

सविकल्पं मानसं तच्चतुर्विधम् मतिश्रुतावधिमनःपर्यय-रूपम् ॥

अन्वयार्थ- मानस अर्थात् विचार या इच्छा सहित ज्ञान सविकल्प ज्ञान है। वह चार प्रकार का है- १) मतिज्ञान, २) श्रुतज्ञान, ३) अवधिज्ञान, ४) मनःपर्ययज्ञान।

निर्विकल्पं मनोरहितं केवलज्ञानम् ॥180॥

अन्वयार्थ- मन रहित अथवा विचार या इच्छा रहित ज्ञान निर्विकल्प ज्ञान है। केवलज्ञान निर्विकल्प है।

॥ इस प्रकार प्रमाण व्युत्पत्ति का प्ररूपण हुआ ॥

नय का लक्षण व भेद

प्रमाणेन वस्तु संगृहीतार्थैकांशो नयः, श्रुतविकल्पो वा, ज्ञातुरभिप्रायो वा नयः, नानास्वभावेभ्यो व्यावृत्य एकस्मिन् स्वभावे वस्तु नयति प्राप्नोतीति वा नयः ॥181॥

अन्वयार्थ- प्रमाण के द्वारा सम्यक् प्रकार ग्रहण की गई वस्तु के एक धर्म अर्थात् अंश को ग्रहण करने वाले ज्ञान को नय कहते हैं। अथवा, श्रुतज्ञान के विकल्प को नय कहते हैं। ज्ञाता के अभिप्राय को नय कहते हैं। अथवा, जो नाना स्वभावों से हटाकर किसी एक स्वभाव में वस्तु को प्राप्त कराता है, वह नय है।

स द्वेधा सविकल्पनिर्विकल्पभेदात् ॥182॥

अन्वयार्थ- सविकल्प और निर्विकल्प के भेद से नय भी दो प्रकार के हैं।

॥ इस प्रकार नय की व्युत्पत्ति का प्ररूपण हुआ ॥

निक्षेप की व्युत्पत्ति

प्रमाणनययोर्निक्षेपणं आरोपणं निक्षेपः, स नामस्थापनादि-भेदेन चतुर्विधः ॥183॥

अन्वयार्थ- प्रमाण और नय के विषय में यथायोग्य नामादिरूप से पदार्थ निक्षेपण करना अर्थात् आरोपण करना निक्षेप है। वह निक्षेप नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव के भेद से चार प्रकार का है।

॥ इस प्रकार निक्षेप की व्युत्पत्ति का प्ररूपण हुआ ॥

नयों के भेदों की व्युत्पत्ति

द्रव्यमेवार्थः प्रयोजनमस्येति द्रव्यार्थिकः ॥184॥

अन्वयार्थ- द्रव्य जिसका प्रयोजन (विषय) है वह द्रव्यार्थिक नय है।

शुद्धद्रव्यमेवार्थः प्रयोजनमस्येति शुद्धद्रव्यार्थिकः ॥185॥

अन्वयार्थ- शुद्ध-द्रव्य जिसका प्रयोजन है वह शुद्ध-द्रव्यार्थिक नय है।

अशुद्धद्रव्यमेवार्थः प्रयोजनमस्येति अशुद्धद्रव्यार्थिकः ॥186॥

अन्वयार्थ- अशुद्ध-द्रव्य जिसका प्रयोजन है वह अशुद्ध-द्रव्यार्थिक नय है।

सामान्यगुणादयोऽन्वयरूपेण द्रव्यं द्रव्यमिति व्यवस्थापयतीति अन्वयद्रव्यार्थिकः ॥187॥

अन्वयार्थ- जो नय सामान्य गुण, पर्याय, स्वभाव को- यह द्रव्य है, यह द्रव्य है, इस प्रकार अन्वयरूप से द्रव्य की व्यवस्था करता है वह अन्वय-द्रव्यार्थिक-नय है।

स्वद्रव्यादिग्रहणमर्थः प्रयोजनमस्येति स्वद्रव्यादिग्राहकः ॥188॥

अन्वयार्थ- स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल और स्वभाव अर्थात् स्वचतुष्टय को ग्रहण करना जिसका प्रयोजन है वह स्वद्रव्यादिग्राहक द्रव्यार्थिक नय है।

परद्रव्यादिग्रहणमर्थः प्रयोजनमस्येति परद्रव्यादिग्राहकः ॥189॥

अन्वयार्थ- परद्रव्य, परक्षेत्र, परकाल, परस्वभाव अर्थात् परचतुष्टय को ग्रहण करना जिसका प्रयोजन है वह परद्रव्यादिग्राहक द्रव्यार्थिक नय है।

परमभावग्रहणमर्थः प्रयोजनमस्येति परमभावग्राहकः ॥190॥

अन्वयार्थ- परमभाव ग्रहण करना जिसका प्रयोजन है वह परमभाव-ग्राहक द्रव्यार्थिक नय है।

पर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येति पर्यायार्थिकः ॥191॥

अन्वयार्थ- पर्याय ही जिसका प्रयोजन है वह पर्यायार्थिक नय है।

अनादिनित्यपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येत्यानादिनित्य-पर्यायार्थिकः ॥192॥

अन्वयार्थ- अनादि-नित्य पर्याय जिसका प्रयोजन है वह अनादि-नित्य पर्यायार्थिक नय है।

सादिनित्यपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येति सादिनित्यपर्यायार्थिकः॥

अन्वयार्थ- सादि-नित्य पर्याय जिसका प्रयोजन है, वह सादि-नित्य पर्यायार्थिक नय है।

शुद्धपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येति शुद्धपर्यायार्थिकः ॥194॥

अन्वयार्थ- शुद्धपर्याय जिसका प्रयोजन है, वह शुद्धपर्यायार्थिक नय है।

अशुद्धपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येत्यशुद्धपर्यायार्थिकः ॥195॥

अन्वयार्थ- अशुद्ध पर्याय जिसका प्रयोजन है, वह अशुद्ध पर्यायार्थिक नय है।

नैकं गच्छतीति निगमः निगमोविकल्पस्तत्रभवो नैगमः ॥196॥

अन्वयार्थ- जो एक जो प्राप्त नहीं होता अर्थात् अनेक को प्राप्त होता

है वह निगम है। निगम का अर्थ विकल्प है। जो विकल्प को ग्रहण करे वह नैगम नय है।

अभेदरूपतया वस्तुजातं संगृह्णातीति संग्रहः ॥197॥

अन्वयार्थ- जो नय अभेद रूप से सम्पूर्ण वस्तु समूह को विषय करता है, वह संग्रह नय है।

संग्रहेण गृहीतार्थस्य भेदरूपतया वस्तुव्यवह्रियत इति व्यवहारः ॥

अन्वयार्थ- संग्रह नय से ग्रहण किये हुए पदार्थ को भेदरूप से व्यवहार करता है, ग्रहण करता है, वह व्यवहार नय है।

ऋजु प्रांजलं सूत्रयतीति ऋजुसूत्रः ॥199॥

अन्वयार्थ- जो नय ऋजु अर्थात् अवक्र, सरल को सूत्रित अर्थात् ग्रहण करता है वह ऋजुसूत्र नय है।

शब्दात् व्याकरणात् प्रकृतिप्रत्ययद्वारेण सिद्धः शब्दनयः ॥200॥

अन्वयार्थ- जो नय शब्द अर्थात् व्याकरण से प्रकृति और प्रत्यय के द्वारा सिद्ध अर्थात् निष्पन्न शब्द को मुख्य कर विषय करता है वह शब्द नय है।

परस्परेणाभिरूढाः समभिरूढाः। शब्दभेदेऽप्यर्थभेदो-नास्तिः। यथा शक्र इन्द्रः पुरन्दर इत्यादयः समभिरूढाः ॥201॥

अन्वयार्थ- परस्पर में अभिरूढ शब्दों को ग्रहण करने वाला नय समभिरूढ नय है। इस नय के विषय में शब्द-भेद होने पर भी अर्थ-भेद नहीं है। जैसे- शक्र, इन्द्र, पुरन्दर ये तीनों ही शब्द देवराज के पर्यायवाची होने से देवराज में ही अभिरूढ है।

एवं क्रियाप्रधानत्वेन भूयत इत्येवंभूतः ॥202॥

अन्वयार्थ- जिस नय में वर्तमान क्रिया की प्रधानता होती है, वह एवंभूत नय है।

शुद्धाशुद्धनिश्चयौ द्रव्यार्थिकस्य भेदौ ॥203॥

अन्वयार्थ- शुद्धनिश्चय नय और अशुद्धनिश्चय नय ये दोनों द्रव्यार्थिक नय के भेद हैं।

अभेदानुपचारितया वस्तुनिश्चीयत इति निश्चयः ॥204॥

अन्वयार्थ- अभेद और अनुपचारता से जो नय वस्तु का निश्चय करे वह निश्चय नय है।

भेदोपचारितया वस्तुव्यवह्रियत इति व्यवहारः ॥205॥

अन्वयार्थ- जो नय भेद और उपचार से वस्तु का व्यवहार करता है, वह व्यवहारनय है।

गुणगुणिनोः संज्ञादिभेदात् भेदकः सद्भूतव्यवहारः ॥206॥

अन्वयार्थ- संज्ञा, संख्या, लक्षण और प्रयोजन के भेद से जो नय गुण-गुणी में भेद करता है वह सद्भूत व्यवहारनय है।

अन्यत्र प्रसिद्धस्य धर्मस्यान्यत्र समारोपणमसद्भूतव्यवहारः ॥207॥

अन्वयार्थ- अन्यत्र प्रसिद्ध धर्म (स्वभाव) अन्यत्र समारोप (निक्षेप) करने वाला असद्भूत व्यवहारनय है।

असद्भूतव्यवहार एवोपचारः, उपचारादप्युपचारं यः करोति स उपचरितासद्भूतव्यवहारः ॥208॥

अन्वयार्थ- असद्भूत व्यवहार ही उपचार है, जो नय उपचार से भी उपचार करता है वह उपचरित-असद्भूत-व्यवहार नय है।

गुणगुणिनोः पर्यायपर्यायिणोः स्वभावस्वभाविनोः कारक-कारकिणोर्भेदः सद्भूतव्यवहारस्यार्थः ॥209॥

अन्वयार्थ- गुण-गुणी में, पर्याय-पर्यायी में, स्वभाव-स्वभावी में, कारक-कारकी में भेद करना सद्भूत व्यवहारनय का विषय है।

1. द्रव्ये द्रव्योपचारः, 2. पर्याये पर्यायोपचारः, 3. गुणे गुणोपचारः, 4. द्रव्ये गुणोपचारः, 5. द्रव्ये पर्यायोपचारः, 6. गुणे द्रव्योपचारः, 7. गुणे पर्यायोपचारः, 8. पर्याये द्रव्योपचारः, 9. पर्याये गुणोपचार इति नवविधोपचारः असद्भूतव्यवहारस्यार्थो द्रष्टव्यः ॥210॥

अन्वयार्थ- १) द्रव्य में द्रव्य का उपचार, २) पर्याय में पर्याय का उपचार, ३) गुण में गुण का उपचार, ४) द्रव्य में गुण का उपचार, ५) द्रव्य में पर्याय का उपचार, ६) गुण में द्रव्य का उपचार, ७) गुण में पर्याय का उपचार, ८) पर्याय में द्रव्य का उपचार, ९) पर्याय में गुण का उपचार, ऐसे नौ प्रकार का उपचार असद्भूत व्यवहारनय का विषय है।

उपचारः पृथग् नयो नास्तीति न पृथक् कृतः ॥211॥

अन्वयार्थ- उपचार पृथक् नय नहीं है अतः उसको पृथक् रूप से नय नहीं कहा है।

मुख्याभावे सति प्रयोजने निमित्ते चोपचारः प्रवर्तते ॥212॥

अन्वयार्थ- मुख्य के अभाव में प्रयोजनवश या निमित्तवश उपचार की प्रवृत्ति होती है।

सोऽपि सम्बन्धोऽविनाभावः, संश्लेषः सम्बन्धः, परिणामपरिणामिसम्बन्धः, श्रद्धाश्रद्धेय-सम्बन्धः, ज्ञानज्ञेय-

सम्बन्धः, चारित्रचर्यासम्बन्धश्चेत्यादि, सत्यार्थः असत्यार्थः सत्यासत्यार्थ श्चेत्युपचरितासद्भूतव्यवहारनयस्यार्थः ॥213॥

अन्वयार्थ- वह सम्बन्ध भी सत्यार्थ अर्थात् स्वजाति पदार्थों में, असत्यार्थ अर्थात् विजाति पदार्थों में तथा सत्यासत्यार्थ अर्थात् स्वजाति-विजाति उभय पदार्थों में निम्न प्रकार का होता है- १) अविनाभावसम्बन्ध, २) संश्लेष सम्बन्ध, ३) परिणामपरिणामि-सम्बन्ध, ४) श्रद्धाश्रद्धेयसम्बन्ध, ५) ज्ञानज्ञेय-सम्बन्ध, ६) चारित्रचर्या सम्बन्ध इत्यादि।

॥ इस प्रकार आगम नय का निरूपण हुआ ॥

अध्यात्म भाषा में नयों का कथन

पुनरप्यध्यात्मभाषया नया उच्यन्ते ॥214॥

अन्वयार्थ- फिर भी अध्यात्म-भाषा से नयों का कथन करते हैं।

तावन्मूलनयौ द्वौ निश्चयो व्यवहारश्च ॥215॥

अन्वयार्थ- नयों के मूल भेद दो हैं- एक निश्चय नय और दूसरा व्यवहार नय।

तत्र निश्चयतयोऽभेदविषयो, व्यवहारो भेदविषयः ॥216॥

अन्वयार्थ- निश्चय नय का विषय अभेद है। व्यवहार नय का विषय भेद है।

तत्र निश्चयो द्विविधः शुद्धनिश्चयोऽशुद्धनिश्चयश्च ॥217॥

अन्वयार्थ- उनमें से निश्चय नय दो प्रकार का है- १) शुद्धनिश्चय, २) अशुद्धनिश्चय।

तत्र निरूपाधिकगुणगुण्यभेद विषयकः शुद्धनिश्चयो यथा केवलज्ञानादयो जीव इति ॥218॥

अन्वयार्थ- उनमें से जो नय कर्मजनित विकार से रहित गुण और गुणी को अभेद रूप से ग्रहण करता है, वह शुद्धनिश्चय नय है। जैसे- केवलज्ञान आदि स्वरूप जीव है। अर्थात् जीव केवलज्ञानमयी है, क्योंकि ज्ञान जीव-स्वरूप है।

सोपाधिकविषयोऽशुद्धनिश्चयो यथा मतिज्ञानादयो जीव इति ॥

अन्वयार्थ- जो नय कर्मजनित विकार सहित गुण और गुणी को अभेदरूप से ग्रहण करता है वह अशुद्धनिश्चय नय है। जैसे- मतिज्ञानादि स्वरूप जीव।

व्यवहारो द्विविधः सद्भूतव्यवहारोऽसद्भूतव्यवहारश्च ॥220॥

अन्वयार्थ- सद्भूतव्यवहार नय और असद्भूतव्यवहार नय के भेद से व्यवहारनय दो प्रकार का है।

तत्रैकवस्तुविषयः सद्भूतव्यवहारः ॥221॥

अन्वयार्थ- उनमें से एक वस्तु को विषय करने वाला सद्भूतव्यवहार नय है।

भिन्नवस्तुविषयोऽसद्भूतव्यवहारः ॥222॥

अन्वयार्थ- भिन्न वस्तुओं को विषय करने वाला असद्भूतव्यवहार नय है।

तत्र सद्भूतव्यवहारो द्विविध उपचरितानुपचरितभेदात् ॥223॥

अन्वयार्थ- उपचरित और अनुपचरित के भेद से सद्भूतव्यवहार नय दो प्रकार का है।

तत्र सोपाधिगुणगुणिनोर्भेदविषयः उपचरितसद्भूतव्यवहारो, यथा जीवस्य मतिज्ञानादयो गुणाः ॥224॥

अन्वयार्थ- उनमें से, कर्मजनित विकार सहित गुण और गुणी के भेद को विषय करने वाला उपचरित-सद्भूतव्यवहारनय है। जैसे- जीव के मति-ज्ञानादिक गुण।

निरूपाधिगुणगुणिनोर्भेदविषयोऽनुपचरितसद्भूतव्यवहारो, यथा जीवस्य केवलज्ञानादयो गुणाः ॥225॥

अन्वयार्थ- उपाधिरहित अर्थात् कर्मजनित विकार रहित जीव में गुण और गुणी के भेदरूप विषय को ग्रहण करने वाला अनुपचरित-सद्भूत-व्यवहारनय है। जैसे- जीव के केवलज्ञानादि गुण।

असद्भूतव्यवहारो द्विविधः उपचरितानुपचरितभेदात् ॥226॥

अन्वयार्थ- उपचरित और अनुपचरित के भेद से असद्भूतव्यवहार नय भी दो प्रकार का है।

तत्र संश्लेषरहितवस्तुसम्बन्धविषय उपचरितासद्भूतव्यवहारो यथा देवदत्तस्य धनमिति ॥227॥

अन्वयार्थ- उनमें से संश्लेष-सम्बन्ध रहित, ऐसी भिन्न वस्तुओं का परस्पर में सम्बन्ध ग्रहण करना उपचरितासद्भूतव्यवहार नय का विषय है। जैसे- देवदत्त का धन।

संश्लेषसहितवस्तुसम्बन्धविषयोऽनुपचरितासद्भूतव्यवहारो, यथा जीवस्य शरीरमिति ॥228॥

अन्वयार्थ- संश्लेष सहित वस्तु के सम्बन्ध को विषय करने वाला अनुपचरितासद्भूतव्यवहार नय है, जैसे- जीव का शरीर इत्यादि।

॥ इस प्रकार पदार्थ के सरल बोध के लिये श्रीमद्देवसेनाचार्य विरचित आलापपद्धति समाप्त हुई ॥

॥ इति शुभम् ॥

